रीतिकाव्य'

1700 ई. के आस-पास हिंदी कविता में एक नया मोड़ आया। इसे विशेषत: तात्कालिक दरबारी संस्कृति और संस्कृत साहित्य से उत्तेजना मिली। संस्कृत साहित्यशास्त्र के कतिपय अंशों ने उसे शास्त्रीय अनुशासन की ओर प्रवृत्त किया। हिंदी में 'रीति' या 'काव्यरीति' शब्द का प्रयोग काव्यशास्त्र के लिए हुआ था। इसलिए काव्यशास्त्रबद्ध सामान्य सृजनप्रवृत्ति और रस, अलंकार आदि के निरूपक बहुसंख्यक लक्षणग्रंथों को ध्यान में रखते हुए इस समय के काव्य **रीतिकाव्य'** कहा गया। इस काव्य की शृंगारी प्रवृत्तियों की पुरानी परंपरा के स्पष्ट संकेत संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, फारसी और हिंदी के आदिकाव्य तथा कृष्णकाव्य की शृंगारी प्रवृत्तियों में मिलते हैं।

इस काल में कई कवि ऐसे हुए हैं जो आचार्य भी थे और जिन्होंने विविध काव्यांगों के लक्षण देने वाले ग्रंथ भी लिखे। इस युग में श्रृंगार की प्रधानता रही। यह युग मुक्तक-रचना का युग रहा। मुख्यतया कवित्त, सवैये और दोहे इस युग में लिखे गए।

कवि राजाश्रित होते थे इसलिए इस युग की कविता अधिकतर दरबारी रही जिसके फलस्वरूप इसमें चमत्कारपूर्ण व्यंजना की विशेष मात्रा तो मिलती है परंतु कविता साधारण जनता से विमुख भी हो गई।

रीतिकाल के अधिकांश कवि दरबारी थे। केशवदास (ओरछा), प्रताप सिंह (चरखारी), बिहारी (जयपुर, आमेर), मतिराम (बूँदी), भूषण (पन्ना), चिंतामणि (नागपुर), देव (पिहानी), भिखारीदास (प्रतापगढ़-अवध), रघुनाथ (काशी), बेनी (किशनगढ़), गंग (दिल्ली), टीकाराम (बड़ौदा), ग्वाल (पंजाब), चन्द्रशेखर बाजपेई (पटियाला), हरनाम (कपूरथला), कुलपति मिश्र (जयपुर), नेवाज (पन्ना), सुरति मिश्र (दिल्ली), कवीन्द्र उदयनाथ (अमेठी), ऋषिनाथ (काशी), रतन कवि (श्रीनगर-गढ़वाल), बेनी बन्दीजन (अवध), बेनी प्रवीन (लखनऊ), ब्रह्मदत्त (काशी), ठाकुर बुन्देलखण्डी (जैतपुर), बोधा (पन्ना), गुमान मिश्र (पिहानी) आदि और अनेक कवि तो राजा ही थे, जैसे- महाराज जसवन्त सिंह (तिर्वा), भगवन्त राय खीची, भूपति, रसनिधि (दतिया के जमींदार), महाराज विश्वनाथ, द्विजदेव (महाराज मानसिंह)।

रीतिकाव्य रचना का आरंभ एक संस्कृतज्ञ ने किया। ये थे आचार्य केशवदास, जिनकी सर्वप्रसिद्ध रचनाएँ कविप्रिया, रसिकप्रिया और रामचंद्रिका हैं। कविप्रिया में अलंकार और रसिकप्रिया में रस का सोदाहरण निरूपण है। लक्षण दोहों में और उदाहरण कवित्तसवैए में हैं। लक्षण-लक्ष्य-ग्रंथों की यही परंपरा रीतिकाव्य में विकसित हुई। रामचंद्रिका केशव का प्रबंधकाव्य है जिसमें भक्ति की तन्मयता के स्थान पर एक सजग कलाकार की प्रखर कलाचेतना प्रस्फुटित हुई। केशव के कई दशक बाद चिंतामणि से लेकर अठारहवीं सदी तक हिंदी में रीतिकाव्य का अजस्र स्रोत प्रवाहित हुआ जिसमें नर-नारी-जीवन के रमणीय पक्षों और तत्संबंधी सरस संवेदनाओं की अत्यंत कलात्मक अभिव्यक्ति व्यापक रूप में हुई।

परिचय

[संपादित करें]

रीतिकाल के कवि राजाओं और रईसों के आश्रय में रहते थे। वहाँ मनोरंजन और कलाविलास का वातावरण स्वाभाविक था। बौद्धिक आनंद का मुख्य साधन वहाँ उक्तिवैचित्र्य समझा जाता था। ऐसे वातावरण में लिखा गया साहित्य अधिकतर शृंगारमूलक और कलावैचित्र्य से युक्त था। पर इसी समय प्रेम के स्वच्छंद गायक भी हुए जिन्होंने प्रेम की गहराइयों का स्पर्श किया है। मात्रा और काव्यगुण दोनों ही दृष्टियों से इस समय का नर-नारी-प्रेम और सौंदर्य की मार्मिक व्यंजना करनेवाला काव्यसाहित्य महत्वपूर्ण है।

इस समय वीरकाव्य भी लिखा गया। मुगल शासक औरंगजेब की कट्टर सांप्रदायिकता और आक्रामक राजनीति की टकराहट से इस काल में जो विक्षोभ की स्थितियाँ आई उन्होंने कुछ कवियों को वीरकाव्य के सृजन की भी प्रेरणा दी। ऐसे कवियों में भूषण प्रमुख हैं जिन्होंने रीतिशैली को अपनाते हुए भी वीरों के पराक्रम का ओजस्वी वर्णन किया। इस

समय नीति, वैराग्य और भक्ति से संबंधित काव्य भी लिखा गया। अनेक प्रबंधकाव्य भी निर्मित हुए। इधर के शोधकार्य में इस समय की शृंगारेतर रचनाएँ और प्रबंधकाव्य प्रचुर परिमाण में मिल रहे हैं। इसलिए रीतिकालीन काव्य को नितांत एकांगी और एकरूप समझना उचित नहीं है। इस समय के काव्य में पूर्ववर्ती कालों की सभी प्रवृत्तियाँ सक्रिय हैं। यह प्रधान धारा शृंगारकाव्य की है जो इस समय की काव्यसंपत्ति का वास्तविक निदर्शक मानी जाती रही है। शृंगारी काव्य तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है। पहला वर्ग रीतिबद्ध कवियों का है जिसके प्रतिनिधि केशव, चिंतामणि, भिखारीदास, देव, मतिराम और पद्माकर आदि हैं। इन कवियों ने दोहों में रस, अलंकार और नायिका के लक्षण देकर कवित्त सवैए में प्रेम और सौंदर्य की कलापूर्ण मार्मिक व्यंजना की है। संस्कृत साहित्यशास्त्र में निरूपित शास्त्रीय चर्चा का अनुसरण मात्र इनमें अधिक है। पर कुछ ने थोड़ी मौलिकता भी दिखाई है, जैसे भिखारीदास का हिंदी छंदों का निरूपण। दूसरा वर्ग रीतिसिद्ध कवियों का है। इन कवियों ने लक्षण नहीं निरूपित किए, केवल उनके आधार पर काव्यरचना की। बिहारी इनमें सर्वश्रेष्ठ हैं, जिन्होंने दोहों में अपनी "सतसई' प्रस्तुत की। विभिन्न मुद्राओंवाले अत्यंत व्यंजक सौंदर्यचित्रों और प्रेम की भावदशाओं का अनुपम अंकन इनके काव्य में मिलता है। तीसरे वर्ग में घनानंद, बोधा, द्विजदेव ठाकुर आदि रीतिमुक्त कवि आते हैं जिन्होंने स्वच्छंद प्रेम की अभिव्यक्ति की है। इनकी रचनाओं में प्रेम की तीव्रता और गहनता की अत्यंत प्रभावशाली व्यंजना हुई है।

रीतिकाव्य मुख्यत: मांसल शृंगार का काव्य है। इसमें नर-नारीजीवन के रमणीय पक्षों का सुंदर उद्‌घाटन हुआ है। अधिक काव्य मुक्तक शैली में है, पर प्रबंधकाव्य भी हैं। इन दो सौ वर्षों में शृंगारकाव्य का अपूर्व उत्कर्ष हुआ। पर धीरे धीरे रीति की जकड़ बढ़ती गई और हिंदी काव्य का भावक्षेत्र संकीर्ण होता गया। आधुनिक युग तक आते आते इन दोनों कमियों की ओर साहित्यकारों का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट हुआ।

इतिहास साक्षी है कि अपने पराभव काल में भी यह युग वैभव विकास का था। मुगल दरबार के हरम में पाँच-पाँच हजार रूपसियाँ रहती थीं। मीना बाज़ार लगते थे, सुरा-सुन्दरी का उन्मुक्त व्यापार होता था। डॉ॰ नगेन्द्र लिखते हैं- "वासना का सागर ऐसे प्रबल वेग से उमड़ रहा था कि शुद्धिवाद सम्राट के सभी निषेध प्रयत्न उसमें बह गये। अमीर-उमराव ने उसके निषेध पत्रों को शराब की सुराही में गर्क कर दिया। विलास के अन्य साधन भी प्रचुर मात्रा में थे।" पद्माकर ने एक ही छन्द में तत्कालीन दरबारों की रूपरेखा का अंकन कर दिया है-

> गुलगुली गिल में गलीचा हैं, गुनीजन हैं,
> चाँदनी है, चिक है चिरागन की माला हैं।
> कहैं पद्माकर त्यौं गजक गिजा है सजी
> सेज हैं सुराही हैं सुरा हैं और प्याला हैं।
> सिसिर के पाला को व्यापत न कसाला तिन्हें,
> जिनके अधीन ऐते उदित मसाला हैं।
> तान तुक ताला है, विनोद के रसाला है,
> सुबाला हैं, दुसाला हैं विसाला चित्रसाला हैं। ६

ऐहलौकिकता, शृंगारिकता, नायिकाभेद और अलंकार-प्रियता इस युग की प्रमुख विशेषताएं हैं। प्रायः सब कवियों ने ब्रज-भाषा को अपनाया है। स्वतंत्र कविता कम लिखी गई, रस, अलंकार वगैरह काव्यांगों के लक्षण लिखते समय उदाहरण के रूप में - विशेषकर शृंगार के आलंबनों एवं उद्दीपनों के उदाहरण के रूप में - सरस रचनाएँ इस युग में लिखी गईं। भूषण कवि ने वीर रस की

रचनाएँ भी दीं। भाव-पक्ष की अपेक्षा कला-पक्ष अधिक समृद्ध रहा। शब्द-शक्ति पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया, न नाटयशास्त्र का विवेचन किया गया। विषयों का संकोच हो गया और मौलिकता का ह्रास होने लगा। इस समय अनेक कवि हुए— केशव, चिंतामणि, देव, बिहारी, मतिराम, भूषण, घनानंद, पद्माकर आदि। इनमें से केशव, बिहारी और भूषण को इस युग का प्रतिनिधि कवि माना जा सकता है। बिहारी ने दोहों की संभावनाओं को पूर्ण रूप से विकसित कर दिया। आपको रीति-काल का प्रतिनिधि कवि माना जा सकता है।

इस काल के कवियों को तीन श्रेणियों में बाँटा जा सकता है-

(१) रीतिबद्ध कवि

(२) रीतिमुक्त कवि

(३) रीतिसिद्ध कवि

विद्वानों का यह भी मत है कि इस काल के कवियों ने काव्य में मर्यादा का पूर्ण पालन किया है। घोर श्रृंगारी कविता होने पर भी कहीं भी मर्यादा का उल्लंघन देखने को नहीं मिलत

नायिका के भेद

[संपादित करें]

भरत के अनुसार नायिका के आठ भेद हैं-

- वासकज्जा
- विरहोत्कंठिता
- स्वाधीनपतिका
- कलहांतरिता
- खंडिता
- विप्रलब्धा
- प्रोषितभर्तृका
- अभिसारिका।

परवर्ती लेखकों के अनुसार, जिसे "प्रकृति-भेद" कहा गया है, नायिका तीन प्रकार की होती है:-

- उत्तमा,
- मध्यमा
- अधमा

"अग्निपुराण" के लेखक ने नायिका के केवल एक वर्गीकरण का उल्लेख किया है :

- स्वकीया
- परवीकया
- पुनर्भू
- सामान्या

इन चार भेदों में से **पुनर्भू** को आगे चलकर मान्यता प्राप्त नहीं हुई। रुद्रट (**काव्यालंकार**, नवीं शताब्दी) तथा रुद्रभट्ट (**श्रृंगारतिलक**, 900-1100 ई.) ने एक षोडश भेद वर्गीकरण प्रस्तुत किया, जिसे परवर्ती लेखकों द्वारा सर्वाधिक प्रधानता दी गई। यह वर्गीकरण इस प्रकार है :

- नायिका
  - स्वकीया
  - परकीया
  - सामान्या
- स्वकीया
  - मुग्धा
  - मध्या
  - प्रगल्भा
- मध्या तथा प्रगल्भा
  - धीरा
  - मध्या (धीराधीरा)
  - अधीरा
- मध्या तथा प्रगल्भा; पुन:
  - ज्येष्ठा
  - कनिष्ठा
- परकीया
  - ऊढ़ा
  - अनूढ़ा (कन्या)

काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में नायिका-भेद

[संपादित करें]

नायिका की चर्चा कामशास्त्र के पश्चात् अग्निपुराण में है, भरतमुनि के मत का अनुसरण करते हुए भोजदेव ने नायिका भेद का निरूपण सविस्तार किया है। भोज ने भी यह भेद स्वीकारा है-

गुणतो नायिका अपि स्यादुत्तमामध्यमाधमा।
मुग्धा मध्या प्रगल्भा च वयसा कौशलेन वा।।
धीराअधीरा च धैर्येण स्पान्यदीया परिग्रहात्।
ऊढ़ानूढ़ोपयमनात् क्रमाज्ज्येष्ठा कनीयसी।।
मानद्र्धेरूद्धतोदात्ता शान्ता च ललिता च सा।
सामान्या च पुनर्भूश्च स्वैरिणी चेति वृत्तितः।।
आजीवतस्तु गणिका रूपाजीवा विलासिनी।
अवस्थातोअपरा चाष्टौ विज्ञेयाः खण्डितादयः।।

'*श्रृंगारप्रकाश* में नायिका भेद अधिक विस्तार के साथ वर्णित है। यहां, **अधमा** और **ज्येष्ठा** नायिकाएं उल्लिखित नहीं हैं। स्वकीया एवं परकीया के पृथक-पृथक् भेद बताये गये हैं-

- उत्तमा
- मध्यमा
- कनिष्ठा
- ऊढ़ा
- अनूढ़ा
- धीरा
- अधीरा
- मुग्धा
- मध्या
- प्रगल्भा

भेदोपभेदों का समग्रतः

- क्षता
- यातायात
- यायावरा

चार भेद तथा सामान्या के

- ऊढा
- अनूढा
- स्वयंवरा
- स्वैरिणी
- वेश्या

ये पांच भेद किये गये हैं। भोज ने अपने ग्रन्थ में **मध्या** और **प्रगल्भा** के 'धीरा अधीरा' संज्ञक तृतीय भेद को नहीं स्वीकारा एवं उन्होंने ज्येष्ठा का नामोल्लेख न करके '**पूर्वानूढ़ा**' को ही ज्येष्ठा अंगीकार किया है। सामान्यता नायिका के भोजकृत भेद विवेचन को शास्त्र में अपूर्व ही मानना पड़ेगा। इसके पश्चात् '**मन्दार-मरन्दचम्पू**' ग्रन्थ में कृष्णकवि ने '**क्षता**', '**अक्षता**' आदि नायिका-विवेचन में भोजदेव का उल्लेख किया है।

हेमचन्द्र के काव्यानुशासन में नायिका भेद

[संपादित करें]

काव्यानुशासन में हेमचन्द्र ने भी नायिका-विवेचन किया है, किन्तु यहां अत्यन्त संक्षिप्त विवरण है। **मध्या**, **मुग्धा** औश्र **प्रगल्भा** तीनों के दो-दो भेद *वय* एवं *कौशल* के आधार पर किया गया है। यथा-**वयसा मुग्धा, कौशलेन मुग्धा, वयसा मध्या, कौशलेन मध्या** और इसी प्रकार **वयसा-प्रगल्भा, कौशलेन प्रगल्भा धीरा, अधीरा** आदि भेद भी **मध्या** आदि नायिकाओं के स्वीकारे गये हैं। भरतमुनि के नाटयशास्त्रीया रीत्यानुसार **पूर्वमूढ़ा ज्येष्ठा, पश्चषद्वढ़ा कनिष्ठा** नायिकाएं कही गयी हैं। परकीया नायिका के मात्र तीन ही भेद-

- विरहोत्कण्ठिता
- अभिसारिका तथा
- विप्रलब्धा

माने है। इसके अतिरिक्त **वाग्भटालंकार** तथा **प्रतापरूयशोभूषण** ग्रन्थों में भी संक्षेपतः नायिका भेद का कथन है। विवेचन में कोई उल्लेखनीय वैशिष्टय नहीं है। वाग्भट्ट ने चार-

- अनूढ़ा
- स्वकीया
- परकीया और
- परांगना (सामान्या)

भेद लिखा है।

साहित्य दर्पण में नायिका भेद

[संपादित करें]

संस्कृत के काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में 'साहित्य दर्पण' का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। इस ग्रन्थ में नायिका भेद का विवेचन मिलता है। आचार्य विश्वनाथ ने अपने पूर्वाचार्यों द्वारा निरूपित नायिका के प्रमुख भेद ही स्वीकार कर उपभेद कथन में नवीनता की कल्पना की है। यथा-**स्वकीया** के मुख्य **मुग्धा**, **मध्या** और **प्रगल्भा** तीन भेदों के उपभेद परिगण सर्वथा नवीन है-

मुग्धा-

प्रथमावतीर्णयौवना
प्रथमावतीर्णमदनविकारा
रतौ वामा (यह शिंगभूपाल ने भी स्वीकारा है)
माने मृदु
समधिकलज्जावती।

मध्या-

विचित्रसुरता
गाढ़तारूण्या
समस्तरतकोविदा
ईषत्प्रगल्भा वचना
मध्यमव्रीडिता।

प्रगल्भा-

स्मरान्धा
गाढ़तारूण्या
समस्तरकोविदा
भावोन्नता
स्वल्प व्रीड़ा
आक्रान्तनायका।

मध्या, प्रगल्भा के **धीरा** आदि तीनों भेद एवं **ज्येष्ठा** और **कनिष्ठा** उपभेद भी वर्णित हैं। साहित्यदर्पण में इस प्रकार **मध्या** तथा **प्रगल्भा** के बारह भेद, **मुग्धा** एक भेद, **स्वीया** के कुल तेरह भेद हुए। **परकीया** के '**कन्या-परोढ़ा** दो भेद, **सामान्या** एक भेद, अब कुल सोलह प्रकार की नायिकाएं हो गयीं। अवस्थिति के अनुसार **स्वाधीनभर्तृका** आदि आठ भेद फिर **उत्तम, मध्यम** और **अधम** और अधम भेद से तीन प्रकार की नायिकाएं। अन्त में यदि भेदोपभेदों का संकलन कर दिया जाय तो-

16×8=12×3=384

प्रकार की नायिकाओं की गणना इस ग्रन्थ में की गयी है। जैसा कि ऊपर की पंक्तियों में कहा- **परकीया** के पूर्वाचार्यों द्वारा विवेचित तीन ही भेद माने हैं-

- विरहोत्कण्ठितका
- अभिसारिका
- वासकसज्जा।

भानुदत्त की रसमंजरी में नायिका भेद

[संपादित करें]

भानुदत्त के छन्द रसमंजरी, रसतरंगिणी और अन्याय कृतियों की रचना के अतिरिक्त सुभाषित ग्रन्थों में भी प्राप्त होते हैं। कवि की जन्मभूमि मिथिला रही परन्तु सारस्वत-साधना-स्थल प्रयाग था। कवि किसी नृपति वीरभानु का आश्रित रहा। यह संकेत हमें पद्यवेनी में उद्धत (छन्द संख्या- 68) तथा सूक्तिसुन्दर (छन्द संख्या- 102) से प्राप्त होता हैं।

त्रयवस्थैव परस्त्री स्यात् प्रथमं विरहोन्मनाः।
ततोअभिसारिका भूत्वाअभिसरन्ती ब्रजेत स्वयम्।।
संकेताच्च परिभ्रष्टा विप्रलब्धा भवेत् पुनः।
पराधीनपतित्वेन नान्यावस्थात्र संगता।।

यही नहीं पद्यवेनी के ही छन्द संख्या 161 में उसने नृप वीरभानु के विजयाभियान का अत्यन्त सुन्दर वर्णन किया है-नृपति ने विशाल सेना के साथ प्रस्थान किया, रणभेरीनाद, घोड़ों की हिनहिनाहट और हाथियों के चिंघाड़ से भीषण कोलाहल उत्पन्न हुए। ब्रह्माण्ड-पिण्ड में एक दरार सी पड़ने लगी। नृप-पराक्रम के ताप से तप्त उड़े हुए सुहागे से मन्दाकिनी, चन्द्रमा तथा तारकदल रूप धर उसको पुनः पूरित किया। आश्रयदाता की ही प्रशंसा में ऐसा वर्णन सम्भव है। भानुदत्त की रचनाओं में निजामशाह तथा शेरशाह के भी यशगान मिलते हैं। परम्परया प्राचीनकाल में कति प्रायः किसी न किसी नृपति ने आश्रय में काव्य-साधना करते रहे। हिन्दी साहित्य का रीतिकाल इस तथ्य को सम्पुष्ट करता है।

रीतिकाल के कवि और आचार्य राज्याश्रय अवश्य हुए, तभी उन्होंने निजामशाह एवं बघेल नृपति वीरभानु के गुण और यश बखाने हैं। अन्तिम आश्रयदाता कदाचित् वीरभानु रहा। उसकी भेंट कवि से प्रयाग में हुई। वीरभानु का शासनकाल 1540-1555 ईसवीय सन् रहा। इसका राज्य-विस्तार प्रयाग तक था। 'गुलबदन' में उल्लेख है कि अरैल तथा कड़ा का नृपति वीरवहान रहा, यह निश्चय ही वीरभानु का मुस्लिम नाम है। वीरभानु पराक्रम, उदारता एवं दानशीलता से अर्जित यश के पश्चात् अन्तिमवय में प्रयागवासी बन गया था। वीरभानूदय काव्य में उल्लेख है-'पुत्र रामचन्द्र के लिए राज्यभार त्याग कर विषय, अभिलाषा आदि से चित्त को निवृत्त कर गंगा-यमुना के तट पर निवास स्थापित किया' (12/27)। वेदरक्षा-अवतार स्वरूप (वीरभानु) ने पुत्र रामचन्द्र को युवराज-पद पर अभिषिक्त कर अपनी चित्तवृत्तियों को, धर्मपरयण (नृप) ने गंगा-तट ब्रह्मनिष्ठ कर[1] लिया। कवि भानुदत्त ने अपनी काव्य-प्रतिभा को सम्यक् विस्तार प्रयाग में ही उदारमना नृप वीरभानु का संरक्षण प्राप्त कर लिया। कवि और नृप दोनों ही की चितवृतियां अन्तिम वय में समानभावी थीं। अन्तिम वय में ही दोनों की भेंट हुई थी। प्रयागस्थ गंगा-यमुना के प्रति वीरभानु की निष्ठा थी एवं कवि के हृदय में प्रगाढ़ ललक-समस्त भू-मण्डल के पर्यटन का मेंरा श्रम व्यर्थ रहा, वाद के लिए विद्या प्राप्त की, अपना 'स्व' गंवाकर विभिन्नधराधीशों के आश्रम में पहुंचा, कमलामुखी सुन्दरियों पर दृष्टि डाली और वियोग दुःख झेला, सब व्यर्थ, जो प्रयाग में बसकर नारायण की आराधना नहीं की[2]। कवि भानुदत्त की प्रयाग के प्रति आस्था वहां निवसने की ललक का ही प्रतिफल था जो वह पर्यटन करते यहां पहुचे और नृपति वीरभानु के आश्रयी बने। वह कहते हैं-सुन्दर भवन त्याग कर निकुञ्ज में रहना सुखकर है, धन-सम्पत्ति दान की वस्तु है, संग्रह करने के लिए नहीं, तीर्थों के जल का पान कल्याणकर है, कुश की शय्या पर शयन करना सभी आस्तरणों के शयन से श्रेष्ठतम हैं,चित्त को धर्ममार्ग में प्रवृत्त करना श्रेयस्कर है तथा सर्वाधिक कल्याणदायक है-गंगा-यमुना के संगम पर रहकर पुराण-पुरुष का[3]स्मरण करना। स्पष्ट है, इस कारण भानुदत्त ने प्रयाग में नृप वीरभानु का आश्रय ग्रहण कर अपनी काव्य-प्रतिभा को निखारा।

नायिका-निरूपण का महत्व

[संपादित करें]

रसमंजरी नायिका-निरूपण के महत्व और प्रमुखता इसलिए है कि रसों में श्रृंगार रस सर्वश्रेष्ठ माना जाता है, रसांगों में उसका आलंबन विभाव और उसमें नायिका का महत्व। यह रसमंजरी नायिका भेद विषय के निरूपण में सर्वथा नवीन परम्परा का प्रवर्तक ग्रन्थ है। इससे पूर्व काव्यशास्त्रीय आचार्यों ने नायिकादि निरूपण विषय को आधार मान स्वतन्त्र ग्रन्थ की रचना नहीं की थी। रसमंजरी की रचना के पश्चात् इस विषय को लेकर संस्कृत, हिन्दी एवं अन्य भाषाओं में ग्रन्थ प्रणयन प्रारम्भ हुआ। परिणामतः इस ग्रन्थ और उसमें विवेचित विषय-वस्तु का स्वतन्त्र महत्व है। रसमंजरी में भी भानुदत्त ने **स्वीया, परकीया, सामान्या**-पूर्वाचार्यों द्वारा विवेचित तीन भेदों का उल्लेख कर **मुग्धा, मध्या, प्रगल्भा** प्रसिद्ध तीनों भेद स्वीकारा है। उन्होंने मुग्धा के चार नवीन भेद किया-**अज्ञात यौवना, ज्ञात यौवना, नवोढा और विश्रब्ध नवोढा**। यह संज्ञा ग्रन्थकार ने अंकुरित यौवन, रूप की विशिष्टता के आधार पर दिया है, स्पष्टताः भेद की संज्ञा नहीं दी है। मध्या की एक नूतन व्याख्या '**समानलज्जामदनेत्यभिहिता**' एवं '**अतिविश्रब्धनवोढा**' दी गयी है। **प्रगल्भा** के भी दो रूप **रतिप्रीतिमती** तथा **आनन्दसम्मोहिता** बताये गये हैं। **मध्या, प्रगल्भा** के **धीरा** आदि उपभेद इस प्रकार छह, **ज्येष्ठा, कनिष्ठा** भेद से बारह और **मुग्धा** कुल तेरह भेद जो साहित्य दर्पण में चर्चित हैं, वही इस ग्रन्थ में भी हैं। फिर भानुदत्त ने इन्हें षट्संख्यक् परिगणित किया-**गुप्ता, विदग्धा, वृत्त सुरतगोपना, वर्तिष्यामाण**

सुरतगोपना। **विदग्धा** एवं **क्रियाविदग्धा** दो प्रकार की होती हैं। ***अनुशयाना-वर्तमान स्थानविघटनादनुशयाना, भाविस्थानाभाव शंकया अनुशयना तथा स्वानधिष्ठान संकेतस्थलं प्रति भार्तुर्गमनानुमानादनुशयाना।*** **अनुशयानाभाव** के तीन भेद हुए। परकीया के इन स्वरूपों के निरूपण का कारण निश्चित ही तत्कालीन समाज में आभिजात्यवर्गीय नगरजनों में विकसित कामशास्त्रानुसारी विलास-लास प्रियता रही होगी। यदि पर्यवेक्षण किया जाय तो रसमंजरी कर्ता द्वारा वर्णित **गुप्ता, विदग्धा, लक्षिता, कुलटा, अनुशयाना** एवं **मुदिता** का अन्तर्भाव **परकीया** के ही अन्तर्गत हो जाता है। भानुदत्त ने पूर्वाचार्यों के ही समान **सामान्या** का एक रूप माना। संकलन करने पर सोलह प्रकार की, फिर उनके तीन रूप- **अन्य सम्भोग दुखिता,**
वक्रोक्तिगर्विता (क) **प्रेमगर्विता** (ख) **सौन्दर्यगर्विता**। इस प्रकार 13 (**स्वीया**) और 1 (**सामान्या**) के **उत्तम, मध्यम** एवं **अधम** तीन-तीन भेद। पारिणामतः रसमंजरी में वर्णित नायिकाओं की संख्या *128×3=364* हुई। इतना ही नहीं पुनः **दिव्य,**
अदिव्य तथा **दिव्यादिव्य** प्रत्येक के तीन-तीन भेद स्वीकारने पर *364×3=1052* संख्या होती है।

हजरत सैय्यद अकबर शाह हुसैनी-श्रृंगारमंजरी

[संपादित करें]

अकबरशाह उपनाम 'बड़े साहब' द्वारा यह ग्रन्थ तेलुगु भाषा में रचित है। इसका संपादन *डॉ. राघवन्* ने तथा प्रकाशन 1952 में हैदराबाद राज्य के पुरातत्व विभाग ने किया। ग्रन्थ के भूमिकाभाग में ग्रन्थकार ने स्पष्ट किया है-**रसमंजरी, आमोदपरिमल (टीका), श्रृंगारतिलक, रसिकप्रिया, रसार्णव, प्रतापरूद्रीय, सुन्दर श्रृंगार, नवरकाव्य, दशरूपक, विलासरत्नाकर, काव्यपरीक्षा, काव्य प्रकाश** आदि प्राचीन ग्रन्थों का आलोडन-विलोडन करके युक्तियुक्त लक्षणों के प्राचीन उदाहरणों के आधार पर नायिका भेदों की कल्पना कर, जिनके उदाहरण न थे उनके उदाहरणों की रचना कर, जिनके नाम न थे उनके नामकरण करके, प्राचीन लक्षण ग्रन्थों से 'उपर्युक्त उदाहरण सम्बन्धित नायिका विवेचन में लिखकर यह रचना की गयी। नवरस में श्रृंगार रस की प्रमुखता होने के कारण श्रृंगार रसालम्बन विभाव के अनुरूप नायिका निरूपण किया गया है। *भानुदत्त विरचित रसमंजरी ही श्रृंगारमंजरी का आधार है।* यत्र-तत्र ग्रन्थकार ने नवीन उपभेदों की परिकल्पना अवश्य कर डाली है। यथा-**परकीया के दो अन्य भेद अन्या और परोढ़ा** फिर **परोढ़ा दो प्रकार की-उद्बुद्धा (स्वयमनुरागिणी), उद्बोधिता (नायकप्रेरिता)।** तब उन्होंने **धीरा, अधीरा, धीराधीरा में तीन भेद उद्बोधिता के ही स्वीकारा** है। इसी प्रकार **उद्बुद्धा के तीन रूप बताये हैं-गुप्ता, निपुणा एवं लक्षिता। निपुणा के तीन भेद-वाड्निपुणा, क्रियानिपुणा, पतिवच्चनिपुणा**। (प्रथम दो तो 'वाग्विदग्धा' एवं 'क्रियाविदग्धा' के ही दूसरे नामकरण हैं, तीसरा भेद नवीन कल्पना है।) **लक्षिता दो प्रकार की-प्रचछन, प्रकाश लक्षिता**। '**प्रकाश-लक्षिता' के कुलटा, मुदीता, अनुशयना, साहसिका भेद किये गये हैं।** (चतुर्थ साहसिका नया भेद है।) इस ग्रन्थ में **सामान्या नायिका के पांच सर्वथा नवीन भेद किये गये हैं-स्वतन्त्रता, जनन्यधीना, नियमिता, क्लृप्तानुराग, कल्पितानुरागा**। इसी प्रकार '*अन्यसम्भोगदुःखिता' और 'मानवती' का कथन 'खण्डिता' के प्रसंग में आया है*। अवस्था के अनुसार विवेचित अष्ट नायिकाओं में एक नयी '*वक्रोक्तिगर्विता* जोड़ी गयी है। **स्वाधीपतिका के भेद कथन में युक्तियुक्त अवधारणा की है। स्वीया-मुग्धा-मध्या प्रग्लभा-परकीया-सामान्या-द्रूतीवच्चिका एवं भाविशंकिता**, ये श्रृंगारमंजरी में वर्णित आठ प्रकार। **प्रोषितपतिका के स्थान पर अवसित-प्रवासपतिका**। **विरहोत्कंठिता के दो भेद-**

कार्यविलम्ब सुरता और अनुत्पन्न सम्भोगा। फिर '**अनुत्पन्न सम्भोगा' के चार भेद बताये हैं- दर्शनानुतापिता चित्रानुतापिता। चित्रानुतापिता स्वप्नानुतापिता। विप्रलब्धा के दो भेद-नायकवच्चितात तथा सखीवच्चिता। खंडिता छह प्रकार की धीरा, अधीरा, धीराधीरा, अन्यसम्भोग-दुःखिता एवं ईष्र्याागर्विता**। ये भेदोभपेद ग्रन्थकर ने पूर्ण विस्तार के साथ विवेचित किये हैं। ऐसा विस्तृत निरूपण अन्य किसी ग्रन्थ में उपलब्ध नहीं है। इतने से ही '*बड़े साहब* ने विराम नहीं लिया। अपितु उन्होंने '*प्रोषितपतिका*' *तथा* '*कलहान्तरिता*' के भी भेद बताये हैं। यथा-**ईष्र्याकलह तथा प्रणयकलह वाली दो प्रकार की कलहान्तरिता। प्रोषितपतिका-प्रवसयपतिका-प्रवस्यपतिका एवं सख्नुतापिता में प्रोषितपतिका के भेद किये गये हैं। परकीयाभिसारिका-ज्योत्स्नाभिसारिका, तमोभिसारिका, दिवाभिसारिका, गर्वाभिसारिका, कामभिसारिका पांच प्रकार की परिगणित की गयी हैं।** अनेकशः नवीन भेदोभेदों की उद्भावना के कारण -श्रृंगारमंजरी नायिका भेद-निरूपण विषयक ग्रन्थों में अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

नायिका भेद निरूपक अन्य ग्रन्थ

[संपादित करें]

श्रृंगारमृतलहरी, रसरत्नहार, रसचन्द्रिका, सभ्यालंकरणम् आदि के अतिरिक्त **रसिक जीवनम्**। इन ग्रन्थों में नयी उद्भावनाएं नहीं हैं। **गौडीय-वैष्णवपम्परा** में भी नायिका विवेचन किया गया हैं। कवि कर्णपूर-विरचित -**अलंकारकौस्तुभ** में नायिका के भेदोपभेद कुल *1108* संख्या तक पहुंचा दिये गये हैं।

नवरमज्जरी

[संपादित करें]

रचयिता - **नरहरि आचार्य**

यह पन्द्रहवीं शती-अन्तिम भाग और सतरहवीं शती-प्रथमभाग के मध्य उपस्थित रहे। ग्रन्थ *छह उल्लासों*में निबद्ध है-दूसरे, तीसरे तथा चौथे उल्लासों में क्रमशः **नायक भेद, नायिका भेद एवं नायिका उपभेदों** का कथन किया गया है।

श्रृंगारमृतलहरी

[संपादित करें]

रचयिता - मथुरा निवासी **सामराज दीक्षित**

बुन्देलखण्ड नृपति आनन्दराय के सभापण्डित रहे। इससे अतिरिक्त **रतिकल्लोलिनी**, **अक्षरगुम्फ** आदि अन्य ग्रन्थों की भी रचना दीक्षित जी ने की थी। श्रृंगारमृतलहरी समग्रत **श्रृंगार रस और उसके भेद**-सहित **नायक भेद, नायक सहाय, नायकोपचारवृत्तियां, नायिका, नायिकावस्था, नायिकाश्रेणी, दूती, नायिका-अलंकार, वियोग में नायिका की दस अवस्थाएं तथा उछदीपन विभावों** की विवेचिका है। रचना सतरहवीं शताब्दी की है।

रसिक जीवन

[संपादित करें]

रचयिता - **गदाधरभट्ट**

पिता गौरीपति तथा पितामह दामोदर (शंकर) भट्ट। रचनाकाल सोलहवीं शती का अन्तिम भाग। रस-विवेचक यह ग्रन्थ काव्य-संग्रह रूप निबद्ध है। इसमें दस प्रबन्ध और लगभग पन्द्रह सौ छन्द हैं। इसमें चौथे से नवें प्रबन्ध में क्रमशः **नवरस, बालावयव, नायक-नायिका, श्रृंगाररस, प्रवासादि, ऋतुवर्णन तथा अन्यरस** वर्णित हैं।

श्रृंगारसारिणी

[संपादित करें]

रचयिता - मिथिला वासी महामहोपाध्याय **आचार्य चित्रधर**

रचना-समय- अठारहवीं शती-उत्तरार्ध भाग। इनकी दूसरी रचना '**वीरतंगिणी**' है। श्रृंगरसारिणी में

1. सभ्यालंकरणम्-गंगानाथ झा केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ, इलाहाबाद से प्रकाशित।
2.सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय- लद्यु ग्रन्थमाला। 27 (संवत् 2038) रचयिता-पण्डित रामानन्द त्रिपाठी, संपादक-श्री कमलापति त्रिपाठी।

श्रृंगाररस-विवेचन ग्रन्थ हैं। यहां **श्रृंगार के विविध पक्षों** के संग **रति,कामदशा, मान, नायिका तथा नायिका-अलंकार** निवेचित हैं।

रसरत्नहार

[संपादित करें]

रचयिता - **शिवराम त्रिपाठी**

रचना-समय अठारहवीं शताब्दी। यह लघु कलेवरीय ग्रन्थ है। प्रतिपादित का आधार दशरूपक तथा रसमञ्जरी प्रतीत होते हैं। **कुल एक सौ दो छन्द**। 18 छन्दों में **रस, श्रृंगार, नायिका-प्रभेद, सखी, दूती, नायक-प्रभेद, सहायक, विप्रलम्भ, स्त्री, अलंकार, व्याभिचारी-भाव और अन्य आठ रस** विश्लेषित हैं।

रसकौम्दी

[संपादित करें]

रचनाकार - **घासीराम पण्डित**

रचना-समय अठारहवीं शती का उत्तर भाग। इनकी दूसरी रचना '**रमचन्द्र**' है। रसकौमुदी में चार अध्याय हैं। यहां क्रमशः **नायिका प्रभेद, नायसंघ, अनुभावादि एवं नवों रस** विवेचित हैं। -
श्रृंगारनायिकातिलकम् (रचनाकार रंगाचार्य

रंगनाथाचार्य), काव्यकौमुदी (रचयिता हरिराम सिद्धान्त नागीश), रसरत्नावली (रचनाकार वीरेश्वर पण्डित भट्टाचार्य 'श्रीवर' समय-सतरवीं शती-प्रारम्भ) में भी नायक-नायिका के भेद-प्रभेद विचारित हैं।

रसकौस्तुभ

[संपादित करें]

रचनाकार - **वेणीदत्तशर्मन**

सम्भवतः यह अठारहवीं शताब्दी-उत्तरभाग की रचना। दो अन्य ग्रन्थ- **अलंकारमञ्जरी** तथा **विरूदावली**। प्रथम रसकौस्तुभ में श्रृंगाररस से सम्बद्ध सामग्री-समग्र विवेचित है। **रस विश्लेषण** से अतिरिक्त यहां **मान-विरति के उपाय, कामदशाएं, विभाव, नायिका भेद, सखी, दूतीभेद, नायिकाभेदादि** का विवेचन किया गया है।

साहित्यकार

[संपादित करें]

रचयिता - **अच्युतरायशर्मन् मोडक**

समय उन्नीसवीं शताब्दी। ग्रन्थ की वस्तुसामग्री बारह अध्यायों में विवेचित है। समुद्र मन्थन में निरस्त रत्नों के नाम पर अध्यायों को नामित किया गया है। दसवें रम्भारत्न में **नायिका-भेद** तथा ग्यारहवें चन्द्ररत्न में **नायक-निरूपण और भेद**- विवेचना प्रस्तुत की गयी है।

कविदेव-श्रृंगार विलासिनी

[संपादित करें]

कवि देव हिन्दी साहित्य में श्रृंगारकालीन श्रेष्ठ कवि हैं। ग्रन्थ निर्माण का काल इस प्रकार दिया है- 'इससे प्रकट है कि उक्त ग्रन्थ देव ने दक्षिण कोंकण देश में जिसे वह विदेश कहते हैं और जो कृष्णावेणी नामक नदी के संगम पर स्थित है, संवत् 1950 (1700ई0) के श्रावण की बहुला नवमी को सूर्योदय के समय पूर्ण किया था। 2××× ने कवि-भ्रम दूर

करने की दृष्टि से अपने प्रचलित नाम देव का प्रयोग इसमें कर दिया है-

अनुकूलो दक्षस्तथा धृष्टः शठ नर एव।
भवति चतुर्धानायकः संवर्णय कवि देव।।

इतना ही नहीं देव एक हिन्दी ग्रन्थ है '**रस विलास**'। इसमें कवि ने **रस, उसके भाव-विभाव और नायिका-भेद** विवेचन किया है। कई छन्द अधिकांशतः एक से हैं-

सदैवैक नारी रतः सोऽनुकूल इत्येव।
दक्षः सर्ववधूष्वथो, समप्रीतिकर एव।।

रसखान की दृष्टि में नायिका-भेद

[संपादित करें]

रसखान के अनुसार नायिका से अभिप्राय उस स्त्री से है जो यौवन, रूप, कुल, प्रेम, शील, गुण, वैभव और भूषण से सम्पन्न हो। रसखान प्रेमोन्मत्त भक्त कवि थे। उन्होंने अपनी स्वच्छंद भावना के अनुकूल कृष्ण प्रेम का चित्रण अपने काव्य में किया। इसीलिए रसखान का नायिका-भेद वर्णन न तो शास्त्रीय विधि के अनुरूप ही है और न ही किसी क्रम का उसमें ध्यान रखा गया है। कृष्ण के प्रति गोपियों के प्रेम-वर्णन में नायिका-भेद का चित्रण स्वाभाविक रूप से हो गया है। नायिका भेद की परंपरा के दर्शन संस्कृत साहित्य तथा संस्कृत-काव्य-शास्त्र में

होते हैं। नायिकाएं तीन प्रकार की बताई हैं-

- स्वकीया
- परकीया एवं
- सामान्य।

इसके अतिरिक्त भी नायिका के जाति, धर्म, दशा एवं अवस्थानुसार अनेक भेद किए गए हैं।[4]प्रेमोमंग के कवि से नायिका भेद के सागर में गोते लगाकर समस्त भेदोपभेद निरूपण की आशा करना निरर्थक ही होगा, क्योंकि इन्होंने गोपियों के स्वरूप को अधिक महत्त्व न देकर उनकी भावनाओं को ही अधिक महत्त्व दिया है। फिर भी गोपियों के निरूपण में कहीं-कहीं नायिका भेद के दर्शन हो जाते हैं।

परकीया नायिका

[संपादित करें]

जो नायिका पर पुरुष से प्रीति करे, उसे परकीया कहते हैं। रसखान के काव्य में निरूपित गोपियां पर स्त्री हैं। पर पुरुष कृष्ण प्रेम के कारण वे परकीया नायिका कहलाएंगी। रसखान ने अनेक पदों में उनका सुंदर निरूपण किया है। उन्होंने परकीया नायिका के चित्रण में नायिकाओं की लोक लाज तथा अपने कुटुंबियों के भय से उनकी वेदनामयी स्थिति

नायिका के दो भेद माने गए है-

अनूठा और ऊढ़ा।

रसखान ने ऊढ़ा नायिका का वर्णन किया है। परकीया के अवस्थानुसार छः भेद होते हैं-

- मुदिता,
- विदग्धा,
- अनुशयना,
- गुप्ता,

- लक्षिता,
- कुलटा।

इनमें से रसखान ने **ऊढ़ा मुदिता** और **विदग्धा** का ही चित्रण किया है।

ऊढ़ा [संपादित करें]

ऊढ़ा वह नायिका है जो अपने पति के अतिरिक्त अन्य किसी पुरुष से प्रेम करे

रसखान ने इस पद में ऊढ़ा का वर्णन किया है-

'औचक दृष्टि परे कहूँ कान्ह जू तासों कहै ननदी अनुरागी।
सौ सुनि सास रही मुख मोरि, जिठानी फिरै जिय मैं रिस पागी।
नीके निहारि कै देखै न आँखिन, हों कबहूँ भरि नैन न जागी।
मा पछितावो यहै जु सखी कि कलंक लग्यौ पर अंक न 'लागी।

मुदिता

[संपादित करें]

यह परकीया के अवस्थानुसा

र भेदों में से एक है। पर-पुरुष-मिलन-विषयक मनोभिलाषा की अकस्मात

पूर्ति होते देखकर जो नायिका मुदित होती है उसे मुदिता कहते हैं। रसखान

ने भी नायिका की मोदावस्था का सुंदर चित्रण किया है -

'जात हुती जमना जल कौं मनमोहन घेरि लयौ मग आइ कै।
मोद भरयौ लपटाइ लयौ, पट घूंघट टारि दयौ चित चाइ कै।
और कहा रसखानि कहौं मुख चूमत घातन बात बनाइ कै।
कैसें निभै कुलकानि रही हिये साँवरी मूरति की छबि छाइ।

छीर जौ चाहत चीर गहें अजू लेउ न केतिक छीर अचैहौ।

चाखन के मिस माखन माँगत खाउ न माखन केतिक खैहौ।
जानति हौं जिय की रसखानि सु काहे कौं एतिक बात बढ़ैहौ।
गोरस के मिस जो रस चाहत सो रस कान्हजू नेकु न पैहौ।

खेलै अलीजन के गन मैं उत प्रीतम प्यारे सौं नेह नवीनो।

बैननि बोध करै इत कौं, उत सैननि मोहन को मन लीनो।
नैननि की चलिबी कछु जानि सखी रसखानि चितैवे कों कीनो।
जा लखि पाइ जँभाई गई चुटकी चटकाइ बिदा करि दीनो।